16

इन्द्रिय और इन्द्रियज्ञान : आधुनिक विज्ञान व जैनदर्शन की दृष्टि से

आधुनिक विज्ञान के अनुसंधान से पता चलता है कि जैनदर्शन पूर्णतः वैज्ञानिक है । जैनदर्शन के सिद्धांतों की परूपणा सर्वज्ञ तीर्थंकर परमात्मा ने की है । जैनदर्शन की मान्यता के अनुसार यह दर्शन इस ब्रह्मांड काल से अनादि-अनंत है ।[1] अतः उसके सिद्धांत की प्ररूपणा करने वाले तीर्थंकर भी अनंत हुए हैं और भविष्य में भी वे अनंत होंगे । सभी तीर्थंकर एक समान सिद्धांत की प्ररूपणा करते हैं ।

तीर्थंकर परमात्मा की सब से अनोखी बिशिष्टता यह है कि प्रव्रज्या ग्रहण करने के पश्चात् वे अपने साधना काल में पूर्णतः मौन रखते हैं । साधना पूर्ण होने के बाद केवलज्ञान स्वरूप आत्मप्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त होने के बाद ही वे उपदेश देना शुरु करते हैं ।[2]

उन्होंने शरीर धारण करने वाले संसारी जीवों के इन्द्रिय के आधार पर पाँच प्रकार बताये हैं । इन्द्रिय पाँच है । 1. स्पर्शनेन्द्रिय/त्वचा, 2. रसनेन्द्रिय/जीभ, 3. घ्राणेन्द्रिय/नाक, 4. चक्षुरिन्द्रिय / आँख, 5. श्रवणेन्द्रिय/कान ।[3]

एकेन्द्रिय जीवों को सिर्फ एक ही इन्द्रिय स्पर्शनेन्द्रिय होती है । पृथ्वी, पानी, अग्नि, वायु, व वनस्पति एकेन्द्रिय जीव हैं । द्वीन्द्रिय जीवों को केवल दो इन्द्रिय स्पर्शनेन्द्रिय व रसनेन्द्रिय होती है । शंख, कौडी, जोंक, कृमि, पोरा केंचुआ आदि द्वीन्द्रिय जीव हैं । त्रीन्द्रिय जीवों को स्पर्शनेन्द्रिय, रसनेन्द्रिय व घ्राणेन्द्रिय होती है । खटमल, जूँ, लीख, चींटी, दीमक, मकोडा, ढोला (पिल्लू), धान्यकीट आदि त्रीन्द्रिय जीव हैं। चतुरिन्द्रिय जीवों में उपर्युक्त तीन इन्द्रिय और चौथी चक्षुरिन्द्रिय होती है । बिच्छू, भौंरा, टिड्डी, मच्छर आदि चतुरिन्द्रिय जीव हैं । पँचेन्द्रिय जीव में पाँचवीं श्रवणेन्द्रिय भी होती है । गाय, घोडा, हाथी, सिंह, बाघ आदि पशु, मछली, मगर आदि जलचर जीव, मेंढक जैसे उभयचर जीव, तोता, मैना, कोयल, कौआ, चिडिया आदि पक्षी, सर्प, गोह, चंदनगोह आदि सरीसृप

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(उरःपरिसर्प) जीव, नकुल, छिपली आदि भूजःपरिसर्प, देव, मनुष्य व नारक के जीव पँचेन्द्रिय हैं ।[4]

हाल ही में गुजरात समाचार की दिनांक 5, मार्च, 2003 की शतदल पूर्ति में डिस्कवरी कॉलम में डॉ. विहारी छाया ने " माइक मे " नामक एक आँख से देखने पर भी अंध मनुष्य के अनुभव का विश्लेषण करता हुआ लेख पढा । उसका तात्पर्य इस प्रकार है ।

"माइक मे" तीन साल का था तब खदान के मजदूरों के लिये जो लैम्प इस्तेमाल किया जाता है, जिसका आविष्कार हम्फ्री डेविड ने किया था । उसमें उपयोगी तैल से भरी हुई जार अर्थात् बोटल उनके मूँह के पास ही फूट जाने पर अकस्मात् हुआ । उसमें वह पूर्णतः अंधा हो गया । बाद में अंधत्व का सामना करके उसने बहुत सी सिद्धियाँ प्राप्त की । देखता हुआ मनुष्य जिस प्रकार कार्य करता है उससे भी बढिया, अच्छी तरह, सूक्ष्मता और जल्दी से काम करने लगा । अंधे मनुष्यों की पर्वत से नीचे उतरने की स्कीइंग की स्पर्धा में उनका वल्ड रेकॉर्ड था । इसी स्पर्धा में सीधे उतारवाले ब्लॅक डायमन्ड नामक पर्वत पर से वह प्रति घंटे 35 माईल के वेग से नीचे उतर जाता था । उसने ई. स. 2000 के मार्च माह में दृष्टि देनेवाला एक ओपरेशन करवाया और दाहिनी आँख में एक नेत्रमणि लगवाया । बाद में 20 मार्च को जब उसकी पट्टी खोली गई तब उसे दृष्टि मिल गई थी । उसकी पत्नी व उसके बच्चों से उसकी दृष्टि मिली । वह दाहिनी आँख से सब कुछ देख सकता था तथापि उससे स्पष्टरूप से किसी को पहचान नहीं सकता था ।

हमें सामान्यतया मालुम है कि अपनी आँखों में कॉर्निया पारदर्शक पटल व लैन्स (नेत्रमणि) ऐसे दो लैन्स होते हैं । किसी वस्तु में से निकलने वाले या उससे परावर्तित होने वाले प्रकाश की किरणें इन्हीं दो लैन्सों द्वारा उसके पीछे आये हुए रेटिना पर पड़ती हैं और वहाँ उसका एक प्रतिबिंब बनाती हैं । इस प्रतिबिंब को चेतनातंत्र द्वारा मग़ज़ में चक्षुरिन्द्रिय द्वारा प्राप्त अनुभव को पहचानने वाले दृष्टिकेन्द्र को पहुँचाया जाता है । बाद में यह दृष्टिकेन्द्र उन संकेतों का पूर्ण विश्लेषण करके उस वस्तु के पूर्ण स्वरूप की आत्मा को पहचान कराता है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

किन्तु " माइक मे " को दृष्टि मिल जाने के बाद भी वह सामने स्थित पदार्थ को स्पष्ट रूप से पहचान नहीं सकता था । उसकी दृष्टि पूर्णतः स्वच्छ थी तथापि उसका मग़ज़ दृश्यों का पृथक्करण कर नहीं सकता था । " माइक मे " को आँख द्वारा जो संकेत प्राप्त होते थे उसको पढने की पद्धति उसके मग़ज़ को मालुम नहीं थी । अतः मग़ज़ में उसी प्रकार की प्रक्रिया नहीं होती थी ।

डॉ. विहारी छाया ने कॉम्प्युटर की परिभाषा में इसी प्रश्न का पृथक्करण किया है । कॉम्प्युटर में हार्डवेअर व सॉफ्टवेअर नामक दो हिस्से होते हैं । ठीक उसी प्रकार अपना शरीर कुदरत का अपूर्व कॉम्प्युटर ही है । आँख उसका ही एक भाग है । उसमें कॉर्निया, नेत्रमणि,, रेटिना आदि हार्डवेअर हैं। जब आँख द्वारा जिसका दर्शन किया जाता है तब उसको अनुभव के रूप में आत्मा के साथ जुडने का काम मन या मग़ज़ के दृष्टिकेन्द्र की कार्यशीलता रूप सॉफ्टवेअर द्वारा होता है । " माइक मे " के लिये उसका हार्डवेअर तो अच्छी तरह काम करता था किन्तु चेतनातंत्र द्वारा प्राप्त दृश्य के संकेतों को पृथक्करण विश्लेषण करके पहचानने का सॉफ्टवेअर काम नहीं करता था । अतः दृश्य को देखने के बावजूद भी उसका आत्मा को स्पष्ट अनुभव नहीं होता था ।

इस बात को ही 2500 वर्ष पहले हो गये श्रमण भगवान श्री महावीरस्वामी ने उनके द्वारा प्ररूपित जैनदर्शन के ग्रंथों व आगमों में निम्नोक्त प्रकार से समझाया है । जिनका वास्तव में आश्चर्यजनक रूप से उपर्युक्त बात के साथ बहुत ही साम्य है ।

जैन शास्त्रकारों ने पाँचों इन्द्रियों के दो प्रकार बताये हैं । 1. द्रव्येन्द्रिय और 2. भावेन्द्रिय ।[5] द्रव्येन्द्रिय के दो प्रकार हैं । 1. निवृत्ति व 2. उपकरण। उसी प्रकार भावेन्द्रिय के भी दो प्रकार हैं । 1. लब्धि व 2. उपयोग ।[6]

जैन कर्मवाद के अनुसार इन्द्रिय की प्राप्ति अंगोपांग नामकर्म व निर्माण नामकर्म से होती है और उसे निवृत्ति रूप द्रव्येन्द्रिय कहा जाता है ।[7] उदा. स्पर्शनेन्द्रिय रूप त्वचा, रसनेन्द्रिय रूप जिह्वा, घ्राणेन्द्रिय रूप नासिका, चक्षुरिन्द्रिय रूप आँख और श्रवणेन्द्रिय रूप कान के रूप में निवृत्ति स्वरूप द्रव्येन्द्रिय प्राप्त होने पर भी वह पूर्णतः काम दे सके ऐसा कोई नियम नहीं है। और तत्तत् इन्द्रिय मे तत् तत् इन्द्रिय संबंधित विषय को ग्रहण करने की शक्ति

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

को उपकरण द्रव्येन्द्रिय कहा जाता है । उदा. त्वचा प्राप्त होने पर भी यदि चेतनातंत्र अपना कार्य न करता हो तो स्पर्श का अनुभव नहीं होता है । यहाँ निवृत्ति रूप द्रव्येन्द्रिय प्राप्त होने पर भी उपकरण रूप द्रव्येन्द्रिय का अभाव है । ठीक उसी तरह सभी इन्द्रिय के लिये जान लेना । संक्षेप में त्वचा के स्पर्श का अनुभव करने की शक्ति, जीभ में स्वाद को पहचानने की शक्ति, नाक की सुगंध या दुर्गंध को पहचानने की शक्ति, आँख की दृश्य देखने की शक्ति और कान की श्रवण करने की क्षमता ही उपकरण रूप द्रव्येन्द्रिय है ।[8]

निवृत्ति व उपकरण स्वरूप द्रव्येन्द्रिय द्वारा तत् तत् इन्द्रिय संबंधित विषयक संकेत मग़ज़ को पहुँचाये जाते हैं । मग़ज़ में पहुँचे हुए इन्हीं संकेतों को पहचानने का कार्य मग़ज़ में स्थित भावेन्द्रिय स्वरूप लब्धि करती है । लब्धि अर्थात् शक्ति जिसे कॉम्प्युटर की भाषा में सॉफ्टवेयर कहा जा सकता है। वह मन के द्वारा सक्रिय होती है तब उपयोग रूप भावेन्द्रिय कार्य करती है। तत् तत् इन्द्रिय संबंधित लब्धि उसको आवृत्त करने वाले कर्म के क्षयोपशम या नाश से पैदा होती है । उदा. गति नामकर्म और जाति नामकर्म से देव, मनुष्य व नारक गति में सभी पाँच इन्द्रिय संबंधित शक्ति प्राप्त होती है । जबकि तिर्यंच गति में जाति नामकर्म से एकेन्द्रियत्व, द्वीन्द्रियत्व, त्रीन्द्रियत्व, चतुरिन्द्रियत्व या पंचेन्द्रियत्व प्राप्त होता है । अतः तत् तत् जाति में तत् तत् गति संबंधित इन्द्रिय संबंधित लब्धि शक्ति प्राप्त होती है ।[9] और उपयोगस्वरूप भावेन्द्रिय का आधार मतिज्ञानावरणीय, श्रुतज्ञानावरणीय, अचक्षुदर्शनावरणीय व चक्षुदर्शनावरणीय कर्म के क्षयोपशम या नाश पर है।[10] अतः पंचेन्द्रियत्व प्राप्त होने पर भी क्वचित् उपर्युक्त चार कर्म में से किसी भी कर्म के उदय/अस्तित्व से तत् तत् इन्द्रिय संबंधित ज्ञान प्राप्त नहीं होता है ।

किसी भी इन्द्रिय द्वारा गृहीत संकेतों का पृथक्करण करने की शक्ति ही लब्धि स्वरूप भावेन्द्रिय है । इस शक्ति के कार्यान्वित होने पर दृश्य की पहचान या उसी इन्द्रिय द्वारा प्राप्त अनुभव आत्मा तक पहुँचता है । जिसे उपयोगस्वरूप भावेन्द्रिय कहा जाता है ।

इस प्रकार दोनों प्रकार की द्रव्येन्द्रिय और भावेन्द्रिय मन से मिलकर कार्य करती हैं तब आत्मा को उस-उस इन्द्रिय संबंधित ज्ञान होता है ।

आत्मा को इन्द्रियप्रत्यक्ष पदार्थ का बोध कराने के लिये मन एक महत्त्वपूर्ण माध्यम/साधन है । आत्मा को इन्द्रिय से होने वाले अनुभव के साथ जुडने का

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

काम मन करता है । यदि मन का इन्द्रिय के साथ संबंध तोड दिया जाय तो इन्द्रिय द्वारा होने वाला अनुभव आत्मा तक नहीं पहुँचता है ।

"माइक मे" ने 40 वर्षों तक उसके दिमाग/मग़ज़ के दृष्टिकेन्द्र का तनिक भी उपयोग नहीं किया था क्योंकि निवृत्ति व उपकरण स्वरूप द्रव्येन्द्रिय के द्वारा दृश्य को ग्रहण करने की शक्ति ही नहीं थी । परिणामतः तत्संबंधित मग़ज़ का दृष्टिकेन्द्र काम करता बंद हो गया था । अब जब तक वह दृष्टिकेन्द्र अपना काम शुरु न करें तब तक किसी भी दृष्य की सही पहचान उनको नहीं हो सकती । इसका आधार उसके ज्ञानावरणीय व दर्शनावरणीय कर्मों के क्षयोपशम या नाश पर निर्भर करता है ।

बहुत से लोग अपनी आँखों की कैमेरा के साथ तुलना करते हैं । वैसे तो जिस प्रकार कैमेरा काम करता है ठीक उसी प्रकार अपनी आँखें काम करती हैं । किन्तु आँख की काम करने की शक्ति व गतिशीलता आधुनिक युग के सुपर कॉम्प्युटर से भी कहीं ज्यादा है । उदा. कैमेरे में किसी दृश्य को लेना हो तो उस दृश्य का पदार्थ कितनी दूरी पर है उसकी गिनती करके फोकसिंग किया जाता है । अब मान लिया जाय कि उसी दृश्य में कोई एक पदार्थ बिल्कुल नजदीक है और दूसरा पदार्थ बहुत ही दूरी पर है। यदि आप नजदीक के पदार्थ पर फोकसिंग करंगे तो दूर का पदार्थ धुंधला हो जायेगा और यदि दूर के पदार्थ पर फोकसिंग करेंगे तो नजदीक का पदार्थ धुंधला हो जायेगा । कैमेरा में दोनों पदार्थ एक साथ स्पष्ट रूप से दिखाई नहीं देंगे ।

जबकि अपनी आँखों के सामने एक पदार्थ बिलकुल नजदीक हो और एक पदार्थ बहुल दूर हो तथापि दोनों एक साथ स्पष्टरूप से दिखाई देंगे । यही अपनी आँखों की विशेषता है । इस प्रकार पूर्ण स्पष्ट चित्र सिर्फ अपनी आँखों से ग्रहण करके मस्तिष्क के दृष्टिकेन्द्र में भेजा जाता है । वहाँ तत्संबंधित लब्धि स्वरूप सॉफ्टवेयर होता है । जब मस्तिष्क उसका उपयोग करता है तभी वह दृश्य आत्मा तक पहुँचता है और उसका स्थायी स्वरूप मग़ज़ में संग्रहील हो जाता है । बाद में कभी पाँच सात साल के बाद उसी दृश्य संबंधित कोई भी पदार्थ सामने आ जाता है तब स्मरणशक्ति द्वारा अपना मग़ज़ उसके स्मृतिकोश में से उसी पुराने दृश्य की छबि को ढूंढ निकालकर स्मरणपट पर रख देता है । इसका मूल कारण अपने

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ज्ञानावरणीय व दर्शनावरणीय कर्मों के क्षयोपशम या नाश और लब्धि व उपयोग स्वरूप भाव इन्द्रिय का कार्य है । और यही स्मृति संस्कार अपने आत्मा के साथ अगले जन्म में भी जाते हैं । उस समय यदि क्वचित् पूर्वभव संबंधि कोई दृश्य या पदार्थ अपने सामने आता है तो उसका स्मरण हो जाता है जिसे जातिस्मरण ज्ञान कहा जाता है । जैन दार्शनिकों ने इस प्रकार के पूर्वजन्म संबंधित ज्ञान को मतिज्ञान अर्थात् स्मृतिशक्ति का ही प्रकार माना है।[11]

संक्षेप में, सिर्फ बाह्य उपकरण स्वरूप द्रव्य इन्द्रिय प्राप्त होने से आत्मा को उसका अनुभव नहीं हो सकता है । किन्तु जब तक बाह्य उपकरण स्वरूप द्रव्य इन्द्रिय से गृहीत संकेतों को लब्धि व उपयोग स्वरूप भाव इन्द्रिय द्वारा पहचाना नहीं जा सकता तब तक आत्मा को उसका अनुभव नहीं होता है । इस कार्य में मन या मस्तिष्क एक आवश्यक साधन है । वह इन्द्रिय के विषय और तत्संबंधित अनुभव को आत्मा के साथ जोड़ देता है ।

जैन परंपरा में कायोत्सर्ग एक प्रकार का उत्कृष्ट ध्यान है । कायोत्सर्ग में उसके शब्दों के अनुसार काय अर्थात् शरीर का उत्सर्जन किया जाता है और उसकी एक विशिष्ट प्रक्रिया है । ध्यान अर्थात् मन, वचन, काया की एकाग्रता ।वह अच्छा भी हो सकता है और बुरा भी । शुभ ध्यान को जैन परंपरा में धर्मध्यान और शुक्लध्यान कहते हैं । जबकि अशुभ ध्यान को आर्तध्यान व रौद्रध्यान कहते हैं । प्रिय पदार्थ के वियोग में और अप्रिय पदार्थ के संयोग में सब को आर्तध्यान होता है । उसी प्रकार प्राप्त किये पदार्थ के रक्षण की चिंता में रौद्रध्यान पैदा होता है । सामान्यतः मनुष्य खराब ध्यान बार बार करता है किन्तु शुभध्यान सभी के लिये बहुत ही कष्टसाध्य है । उसमें ऊपर बतायी हुई समझ काफी महत्त्वपूर्ण सिद्ध हो सकती है । ध्यान में मन का व्यापार ही महत्त्वपूर्ण है । मन जितनी गहराई में सोच सके उतना ध्यान ज्यादा दृढ होता है । किन्तु इस चिंतन का आधार ज्ञान है । जितना ज्ञान विशाल उतनी गहराई में चिंतन हो सकता हो अर्थात् ज्ञान ही ध्यान का आधार है । बिना ज्ञान ध्यान हो ही नहीं सकता ।

कायोत्सर्ग के दौरान मन चिंतन में लग जाता है अतः उसका आत्मा के साथ संबंध जुड जाता है और बाह्य द्रव्येन्द्रिय के साथ उसका संपर्क टूट जाता है । इस प्रकार ध्यानस्थ अवस्था में द्रव्येन्द्रिय का भावेन्द्रिय से संबंध

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

टूट जाता है । परिणामतः कायोत्सर्ग अवस्था मे किसी भी मनुष्य या पशु-पक्षी द्वारा यदि शारीरिक दुःख पैदा किया जाता है तो उसका आत्मा को तनिक भी अनुभव नहीं होता है । अतएव ध्यानस्थ भगवान महावीरस्वामी को गोपालक ने कान में कीलें लगाये तब उनको दुःख का कोई अनुभव नहीं हुआ था किन्तु खरक वैद्य ने जब प्रभु के कान में से कीलें बाहर निकाले उस समय उन्होंने भयंकर/तीव्र चीख निकाली थी ।[12]

इस प्रकार विज्ञान में जो अनुसंधान अभी हो रहे हैं उसका ही प्रतिपादन भगवान महावीर ने 2500 साल पहले किया था जिन्हें जैन धर्मग्रंथों में पाया जाता है ।

संदर्भ:

1. द्रष्टव्य : जैनदर्शनमां वैज्ञानिक रहस्यो ले. मुनि श्री नंदीघोषविजयजी पृ.नं. 166

2. कल्पसूत्र टीका, व्याख्यान नं. 6 (टीकाकार : उपा. श्री विनयविजयजी)

3. स्पर्शन-रसन-घ्राण-चक्षुः-श्रोतानि ।।20।। (तत्त्वार्थ सूत्र - अध्याय 2, सूत्र नं. 20)

4. जीवविचार प्रकरण, गाथा नं. 2, 15, 16, 17, 18, 19, 20, 21

5. पंचेन्द्रियाणि ।।15।। द्विविधानि ।।16।। निर्वृत्त्युपकरणद्रव्येन्द्रियम् ।।17।।
(तत्त्वार्थसूत्र, अध्याय-2, सूत्र नं. 15, 16, 17)

6. लब्ध्युपयोगौ भावेन्द्रियम् ।।18।। (तत्त्वार्थसूत्र, अध्याय-2, सूत्र नं. 18)

7. निर्वृत्तिरङ्गोपाङ्गनामनिर्वर्तितानीन्द्रियद्वाराणि ।।
निर्माणनामाङ्गोपाङ्गप्रत्यया ।। (तत्त्वार्थसूत्र टीका, अध्याय-2, सूत्र नं. 17)

8. यत्र निर्वृत्तिद्रव्येन्द्रिय तत्रोपकरणेन्द्रियमपि न भिन्नदेशवर्ति, तस्याः स्वविषय-ग्रहणशक्तेर्निर्वृत्तिमध्यवर्तिनीत्वात् ।। (तत्त्वार्थसूत्र टीका, अध्याय-2, सूत्र नं. 17)

9. लब्धिर्गतिजातिनाकर्मजनिता तदावरणीयकर्मक्षयोपशमजनिता च ।।
(तत्त्वार्थसूत्र टीका, अध्याय-2, सूत्र नं. 18)

10. स्पर्शादिषु मतिज्ञानोपयोगः ।। (तत्त्वार्थसूत्र टीका, अध्याय-2, सूत्र नं. 18)

11. कर्मग्रंथ टीका, गाथा नं. 4-5 (आ. श्री देवेन्द्रसूरिकृत)

12. कल्पसूत्र, संस्कृत टीका, व्याख्यान नं. 6 (टीकाकार उपा. श्री विनयविजयजी)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org